डॉ. गोपाल राय और हिन्दी कथालोचना

संपादक

पूनम सिन्हा

डॉ० गोपाल राय और हिन्दी कथालोचना

संपादक

पूनम सिन्हा

सह-संपादक

डॉ० त्रिविक्रम नारायण सिंह

प्रतिभा प्रकाशन

ISBN : 978-81-941225-8-6

प्रथम संस्करण

2020

सर्वाधिकार ©

संपादकाधीन

प्रकाशक

प्रतिभा प्रकाशन

केदारनाथ रोड (बिजली ऑफिस के पास)

मुजफ्फरपुर-842001

फोन : 9955658474, 9572980709

अक्षर-संयोजन

अमित कुमार कर्ण

आवरण

शशिकांत सिंह

मुद्रक

जी० एस० ऑफसेट, दिल्ली

मूल्य

350.00 (तीन सौ पचास रुपये)

Dr. Gopal Rai Aur Hindi Kathalochana

Rs. 350.00

अनुक्रम

संपादकीय —7

धरोहर :

भाषा चिन्तन : शुद्ध भाषा की खोज	**गोपाल राय**	–13
स्मृति-शेष बंधुवर	**निर्मला जैन**	–22
बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी: डॉ० गोपाल राय	**हरदयाल**	–27
समावेशी दृष्टि से लिखा हिन्दी उपन्यास का इतिहास	**मैनेजर पाण्डेय**	–34
विद्धांग–बद्ध–कोदण्ड–मुष्टि–खर रुधिर-स्राव	**सत्यकाम**	–41
उपन्यास की संरचना : संदर्भ-प्रेमचंद के उपन्यासों की यथार्थवादी संरचना	**डॉ. पूनम सिन्हा**	–54
हिन्दी कहानी का इतिहास-2 साहित्य भी इतिहास भी	**डॉ. पूनम सिन्हा**	–65
इतिहासकार गोपाल राय	**अमिता पाण्डेय**	–71

आलेख :

कथा-आलोचना की सैद्धांतिकी और डॉ० गोपाल राय	**डॉ. रेवती रमण**	–77
डॉ० गोपाल राय की कथालोचना	**डॉ. चंद्रभानु प्रसाद सिंह**	–81
नलिनविलोचन शर्मा एवं गोपाल राय की साहित्यदृष्टि : संदर्भ-गोदान	**डॉ. सुधा बाला**	–85
हिन्दी उपन्यासालोचन के हिमालय : डॉ० गोपाल राय	**डॉ. जंगबहादुर पाण्डेय**	–93
गोपाल राय की सृजनात्मकता: कथालोचना की विस्तृत भूमि	**डॉ. संजय पंकज**	–98
हिन्दी कहानी का इतिहास लेखन और डॉ० गोपाल राय	**डॉ. त्रिविक्रम ना.सिंह**	–102
उपन्यास की संरचना और डॉ० गोपाल राय	**डॉ. रामेश्वर द्विवेदी**	–109

गोपाल राय : एक दृष्टि — डॉ. राजीव कुमार झा —116
शेखर : एक जीवनी और गोपाल राय की विवेचना — डॉ. धीरेन्द्र प्रसाद राय —121
मैला आँचल की आंचलिकता:
डॉ० गोपाल राय — डॉ. कल्याण कुमार झा —133
उपन्यास आलोचना की परंपरा और गोपाल राय — डॉ. संत साह —137
मैला आँचल में लोकविश्वास के तत्त्वों की
पहचान : डॉ० गोपाल राय — डॉ. साक्षी शालिनी —140
साहित्येतिहास-लेखन की कठिनाइयाँ और
डॉ० गोपाल राय — डॉ. राकेश रंजन —144
डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में मैला आँचल में
स्वातंत्र्योत्तर राजनीति की प्रकृति — डॉ. सुशांत कुमार —153
डॉ०. गोपाल राय की औपन्यासिक आलोचना
का अनुशीलन — डॉ. संध्या पाण्डेय —157
आंचलिक उपन्यास की अवधारणा और गोपाल राय — डॉ. चित्तरंजन कुमार —163
उपन्यास शिल्प और गोपाल राय का विवेचन — सोनल —170
गोदान की आलोचना प्रक्रिया और कथालोचक
गोपाल राय — अखिलेश कुमार —176
हिन्दी उपन्यासालोचन और डॉ० गोपाल राय — डॉ. माधव कुमार —180
कथा आलोचक डॉ० गोपाल राय — डॉ. पल्लवी —185
डॉ० गोपाल राय : समीक्षा और साहित्याब्दकोश — समीक्षा सुरभि —188
कथालोचक डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में
विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ — डॉ. प्रीति कुमारी —200
डॉ० गोपाल राय की दृष्टि में मैला आँचल की
भाषागत विशिष्टता — डॉ. इंदिरा कुमारी —205
हिन्दी उपन्यास का इतिहास और गोपाल राय — पल्लवी कुमारी —211
उपन्यास की पहचान मैला आँचल के संबंध
में गोपाल राय की विवेचना — डॉ. अंशु कुमारी —216
हिन्दी कहानी का इतिहास और डॉ० गोपाल राय — विकास कुमार —220

संस्मरण :

मैं और गोपाल राय — उषाकिरण खान —225
इतिहासकार-कोशकार डॉ० गोपाल राय :

एक संक्षिप्त परिचय **भगवानदास मोरवाल** –227
सुखद स्मृतियों में गोपाल राय **डॉ. श्रीनारायण प्रसाद सिंह**–232

साक्षात्कार :
डॉ० गोपाल राय का साक्षात्कार
(समीक्षा से साभार) **डॉ. पूनम सिन्हा** –236
प्रो. सत्यकाम का साक्षात्कार : **डॉ. पूनम सिन्हा** –243
डॉ० खगेन्द्र ठाकुर का साक्षात्कार : संदर्भ
डॉ० गोपाल राय **डॉ. सुनीता गुप्ता** –258
डॉ० रामवचन राय का साक्षात्कार : संदर्भ
डॉ० गोपाल राय **डॉ. पूनम सिन्हा** –263
डॉ. माधव कुमार
अरुणकमल का साक्षात्कार : संदर्भ
डॉ० गोपाल राय **विनीता कुमारी** –268
प्रतिवेदन –271

प्रो० सत्यकाम का साक्षात्कार

प्रो० पूनम सिन्हा

प्रश्न- आप आरंभ से ही हिन्दी कथालोचना से जुड़े हैं। आमतौर पर यह माना जाता है कि हिन्दी कथालोचना का विकास वैसा नहीं हुआ जैसा हिन्दी काव्य आलोचना का। इसके बारे में आप क्या कहना चाहेंगे?

उत्तर : आलोचना का मुख्य उद्देश्य होता है किसी परंपरा को समझना, कृति को समझना और लेखक को समझना साथ ही कृति जिस परिवेश में लिखी गई है उसे समझना, रचनाकार के दृष्टिकोण को समझना, उसके विजन को समझना और सब मिलाकर ये समझना कि किसी समय, किसी परिप्रेक्ष्य, किसी काल में किस प्रकार का साहित्य रचा जा रहा है और उसका मकसद क्या है। जहाँ तक हिन्दी कथा-आलोचना का सवाल है—जब हिन्दी में उपन्यास लेखन ही उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शुरू हुआ तो उसकी आलोचना तो पहले से नहीं हो सकती, नहीं मिल सकती है। खड़ी बोली में पहले गद्य रचित हुआ और उसके बाद कविता लिखी जाने लगी और जब गद्य का निर्माण हो रहा था उस समय हमारे जितने भी साहित्यकार थे, चाहे वो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हों, चाहे महावीर प्रसाद द्विवेदी हों; ये सब लोग प्रयत्न कर रहे थे कि खड़ी बोली को एक रूप मिल जाए। इसी बीच हिन्दी में कहानियाँ और उपन्यास लिखे जाने लगे। उपन्यास को एक ऊँचाई तक पहुँचाने में हम सब जानते हैं कि 'प्रेमचंद' का योगदान है और इसे लोकप्रिय बनाने में देवकीनंदन खत्री की 'चंद्रकांता संतति' का योगदान है लेकिन सबसे ज्यादा आलोचना के जो केन्द्र बने थे वे प्रेमचंद। प्रेमचंद ने जब कलम उठाई और जब उन्होंने लिखना शुरू किया तो नवजागरण का भी दौर था और राष्ट्रीय आंदोलन का भी; तो इन दोनों ही मुद्दों को लेकर प्रेमचंद आगे बढ़े और उन्होंने समाज को फिर से समझने-समझाने की कोशिश की यानि परंपरा से जो रूढ़ियाँ चली आ रही थीं उन्हें समझने और उन्हें तोड़ने

का प्रयास किया अपनी रचनाओं में। प्रेमचंद बिल्कुल एक नये ढंग से कहानियाँ लिख रहे थे। उपन्यास लिख रहे थे। उस समय तक हिन्दी उपन्यास का कोई मॉडल नहीं था। हमारे पास कथाएँ थीं; हमारे पास उर्दू दास्तान की भी एक परंपरा थी। लेकिन हिन्दी में मॉडल बनाने का काम किया प्रेमचंद ने। एक नई दृष्टि भी दी। कृतियाँ आईं और तब उनकी समीक्षा भी हुई, मूल्यांकन भी हुआ।

प्रश्न : उपन्यास नयी विधा के रूप में सामने आया तो क्या इसके लिए आलोचना को नए औजार तलाशने पड़े?

उत्तर : अब इसे समझने के लिए नये औजारों की जरूरत थी। आलोचना कृति या कृतिकार को समझने के लिए नया शास्त्र रचती है, और इनका निर्माण हमारे आलोचकों ने किया। आरंभ में जैनेन्द्र ने प्रेमचंद पर लिखा आगे चलकर रामविलास शर्मा ने लिखा, नंददुलारे वाजपेयी ने और नगेन्द्र ने प्रेमचंद पर विचार किया। इंद्रनाथ मदान ने 'हिन्दी उपन्यास पहचान और परख' नामक किताब लिखी और आजादी के बाद तो प्रेमचंद पर, हिन्दी उपन्यास पर, विधिवत ढंग से काम हुआ। जब यह बात कही जाती है कि हिन्दी काव्य की आलोचना जिस व्यवस्थित ढंग से बढ़ी उस व्यवस्थित ढंग से हिन्दी कथा आलोचना नहीं बढ़ सकी तो बात मुझे कुछ समझ में नहीं आती, क्योंकि हिन्दी की जो कथा परंपरा है चाहे वो उपन्यास हो या कहानी हो तो उसे प्रेमचंद ने एक ऊँचाई तक पहुँचा दिया था और उसके बाद लोगों ने प्रेमचंद को समझने की कोशिश की। नये ढंग की 'नवल कथा' को समझने की कोशिश की और उसके बाद कई सिद्धांत विकसित हुए; रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामविलास शर्मा, नलिन विलोचन शर्मा इन लोगों ने हिन्दी उपन्यास के बारे में और खासतौर पर प्रेमचंद पर गंभीरता से विचार किया और इससे कथा-आलोचना के सिद्धांत भी निर्मित हुए। मैं एक वाकया सुनाना चाहता हूँ–"ये वाकया मैंने बाबूजी डॉ० गोपाल राय से सुना था। उनके गुरु थे आचार्य नलिन विलोचन शर्मा। नलिन विलोचन शर्मा जी हिन्दी आलोचना के शिखर पुरुष थे और वे अपने ढंग से हिन्दी कथा की आलोचना करते थे और जिस ढंग से उन्होंने प्रेमचंद की आलोचना की, जिस ढंग से उन्होंने 'मैला आँचल' की आलोचना की वह नया प्रयास था। 'मैला आँचल' उपन्यास की पहले नोटिस नहीं ली गई थी लेकिन नलिन विलोचन शर्मा ने इसके महत्त्व को स्थापित किया और इसके बाद ही यह रचना अखिल भारतीय स्तर पर एक प्रमुख कृति बनी और इस प्रकार उपन्यास के सिद्धांत

निर्मित हुए। नलिन विलोचन शर्मा के कहने पर बाबूजी के शोध का जो विषय निर्धारित हुआ वह था 'हिन्दी कथा साहित्य पर पाठकों की रुचि का प्रभाव' देखिए नलिन विलोचन शर्मा कितने जागरूक व्यक्ति थे। उनको ये पता था कि अब समय आ गया है, हिन्दी कथा साहित्य अब इतना समृद्ध हो चुका है, कि उसका एक सिद्धांत बनाना होगा। इसलिए उन्होंने गोपाल राय जी को कहा कि आप ये खोज कीजिए कि हिन्दी कथा साहित्य पर पाठकों की रुचि का क्या प्रभाव पड़ता है। उन्होंने शोध किया, अपनी स्थापनाएँ दीं।

प्रश्न : हिन्दी में और किन आलोचकों ने उपन्यास पर विधिवत ढंग से काम किया है?

उत्तर : रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद को स्थापित किया यानी उन्होंने प्रेमचंद को सही परिप्रेक्ष्य में देखकर लोगों को बताया कि प्रेमचंद क्या हैं? फिर तो एक नाम और लेना चाहूँगा डॉ० कमल किशोर गोयनका का। कमल किशोर गोयनका ने अपना सारा जीवन लगा दिया प्रेमचंद को समझने और समझाने में। प्रेमचंद की कृतियों का कोई भी कोना ऐसा नहीं है जिसको उन्होंने नहीं छान मारा। दो व्यक्ति, गोपाल राय और कमल किशोर गोयनका ने जीवन भर प्रेमचंद और उपन्यासों पर ही काम करते रहे। गोपाल राय जी ने तो उपन्यासों पर काम किया और उन्होंने न केवल अलग-अलग उपन्यासों पर लिखा, बल्कि दो रचनाएँ, जो उन्होंने अपने जीवन के अंतिम चरण में लिखीं, 'हिन्दी उपन्यास का इतिहास' और तीन खंडों में छपा हुआ 'हिन्दी कहानी का इतिहास', ऐसी रचना अभी न हिन्दी कविता के क्षेत्र में सामने आई है न हिन्दी नाटक में, न निबंध के किसी भी क्षेत्र में। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जो कह दिया कि 'परीक्षा गुरु' हिन्दी का पहला अंग्रेजी ढंग का नॉवेल है; 'भाग्यवती' पहला नॉवेल है। तो इसकी पूँछ पकड़कर सभी दौड़ने लगे और आज भी विद्यार्थियों को यही पढ़ाया जाता है। लेकिन गोपाल राय को यह स्वीकार नहीं था। उन्होंने पंडित गौरीदत्त की एक पुस्तक ढूँढ़ निकाली, जिसका नाम है 'देवरानी-जेठानी की कहानी' और उन्होंने विस्तृत ढंग से यह स्थापित किया कि अगर हिन्दी का पहला उपन्यास मानना है तो 'देवरानी-जेठानी की कहानी' ही पहला उपन्यास है। मधुरेश जी ने काम किया प्रेमचंद पर और उपन्यासों पर। प्रेमचंद पूर्व के हिन्दी उपन्यासों पर, ज्ञानचंद्र जैन ने बहुत काम किया है। तुलनात्मक अध्ययन भी किए गए जैसे गोर्की और प्रेमचंद पर। इस पर कई तुलनात्मक अध्ययन हुए। हंसराज रहबर ने प्रेमचंद पर एक बहुत महत्त्वपूर्ण किताब लिखी, 'प्रेमचंद जीवन कला और

कृतित्व', इंद्रनाथ मदान ने पुस्तक लिखी 'हिन्दी उपन्यास पहचान और परख'। वस्तुतः यह उनकी संपादित पुस्तक है जिसमें अंग्रेजी और विदेशी आलोचकों के साथ-साथ हिन्दी के प्रमुख आलोचकों की भी प्रमुख रचनाओं का उन्होंने संग्रह किया। इसमें उनका एक बहुत महत्त्वपूर्ण लेख है 'आधुनिकता और समकालीन उपन्यास'। इसी में डॉ० धर्मवीर भारती का लेख संकलित है, 'उपन्यास और आत्मान्वेषण'। उपन्यास को केंद्र में रखकर कई पुस्तकें और पत्रिकाओं के विशेषांक निकले, जिसकी विस्तार से यहाँ चर्चा नहीं की जा सकती है। जो बाद के कथाकार थे उन्होंने अपने पहले के कथाकारों पर और अपने समकालीन कथाकारों पर भी लिखा, जैसे मार्कण्डेय ने यशपाल, जैनेन्द्र और अज्ञेय पर लिखा। उपेन्द्र नाथ अश्क ने 'नई कहानी' का पर्यवेक्षण किया, हरिशंकर परसाई ने भी 'नई कहानी' पर लिखा और नामवर सिंह ने 'नई कहानी' पर विस्तार से विचार किया है, सुरेन्द्र चौधरी ने 'समसामयिक कहानियों' पर विचार किया है। मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, नेमिचन्द्र जैन ने एक व्यवस्थित ढंग से हिन्दी कथा साहित्य पर लिखा। तो इस प्रकार एक इतिहास लिखा जा सकता है इसका। मेरा यह मानना है कि हिन्दी कथा आलोचना आज बहुत ही मजबूत है। बहुत ही वैज्ञानिक ढंग से हिन्दी कथा को समझने की कोशिश की गई है और जैसे-जैसे हिन्दी उपन्यास और हिन्दी कहानी का रूप और ढंग बदल रहा है वैसे-वैसे आलोचना के टूल्स, आलोचना के औजार भी बदल रहे हैं।

प्रश्न : हिन्दी आलोचना ने चाहे वह कथालोचना हो या काव्य-आलोचना अपना कोई सिद्धांत नहीं विकसित किया बल्कि पश्चिम से उधार लेकर हिन्दी आलोचना के सिद्धांतों को बनाया गया।

उत्तर : आपने बिल्कुल ठीक कहा-हिन्दी आलोचकों ने अपना सिद्धांत नहीं गढ़ा और लगातार जो पश्चिम के सिद्धांत थे, उन सिद्धांतों को अपनाया और उसके आधार पर आलोचना-पद्धति विकसित की। भारत की आलोचना-पद्धति बहुत विकसित थी। हमारे यहाँ काव्य शास्त्र की समृद्ध परंपरा मिलती है, लेकिन जब आधुनिक साहित्य सामने आया और नई आलोचना पद्धति की जरूरत महसूस हुई तो साहित्य के आलोचकों को और कोई मानदंड न मिला और उन्होंने पश्चिम से मानदंड आयात किया; चाहे वो स्वच्छंदतावाद हो चाहे मार्क्सवाद हो चाहे अस्तित्ववाद हो और इस प्रकार हमारी हिन्दी आलोचना पूरी तरह से पश्चिम आलोचना पर आश्रित हो गयी। कथा-आलोचना में भी यह बात लागू होती है और काव्य-आलोचना में भी।

हिन्दी आलोचना पश्चिम से उधार लेकर अपना काम चलाती है और आज भी चला रही है। हालांकि इसमें कुछ बदलाव अब धीरे धीरे आ रहे हैं और आलोचना के भारतीय सिद्धांत भी विकसित हो रहे हैं। 'कथा' में भारतीय परंपरा के सूत्र ढूँढ़ने का सिलसिला निकल पड़ा है।

प्रश्न : आमतौर पर यह माना जाता है कि भारत में उपन्यास का आरंभ यूरोपीय (अंग्रेजी) उपन्यासों की नकल से हुआ। आपके क्या विचार हैं?

उत्तर : बिल्कुल सही कहा; जैसा कि मैंने कहा कि हिन्दी-आलोचना ने कोई अपना सिद्धांत नहीं गढ़ा। उपन्यास की जब आलोचना आरंभ हुई तो यह देखा जाने लगा कि भारत में उपन्यास का आरंभ किस प्रकार हुआ। आलोचकों ने फिर पश्चिम की ओर ही देखा और कहा कि पहले पश्चिम में उपन्यास का उदय हुआ और उसके बाद हमने उसकी नकल की। 'उपन्यास' भारत में उपजी विधा नहीं है, बल्कि ये पश्चिमी, खासतौर पर यूरोपीय विधा है। आरंभ में लोगों ने ये लिखना शुरू किया लेकिन बाद में जब शोध होने लगे और नये-नये विचार सामने आने लगे तो यह विचार बहुत तेजी से आया कि ऐसा नहीं हैं; भारत में जो उपन्यास लिखे गए वे उपन्यास यूरोपीय उपन्यासों की नकल नहीं हैं बल्कि ये देशज उपन्यास हैं और इसके लिए जो उपन्यास आरंभ में लिखे गए–छमाण आठ गुंठ (फकीरमोहन सेनापति, उड़िया), प्रेमचंद के सभी उपन्यास, बंकिम बाबू (बांग्ला) के उपन्यास, हरिनारायण आप्टे (मराठी) के उपन्यास, रुस्वा का 'उमराव जान अदा' (उर्दू) और भारतीय भाषाओं जैसे पंजाबी, मलयालम, कन्नड़, तमिल सभी भाषाओं में एक साथ उपन्यास का उदय हुआ। ये सभी भारतीय कथा परंपरा के वाहक हैं।

प्रश्न : तो क्या आप कथा और उपन्यास में कोई भेद नहीं मानते?

उत्तर : हाँ देखिए कथा और उपन्यास में कोई भेद नहीं होता है। भारतीय कथा परंपरा की मैं बात कर रहा था जिसमें पंचतंत्र हर्षचरित भी है, कादंबरी भी है। एक परंपरा हमारे सामने रामायण की है, महाभारत की है। जब उपन्यास लेखन की परंपरा शुरू हुई तो यही परंपरा आगे बढ़ी। हाँ, ये ठीक है कि उस समय अंग्रेजी ढंग के नॉवेल से हमारा समाज परिचित हो रहा था और ढाँचे में हो सकता है कि थोड़ा बहुत उसकी नकल की गई हो लेकिन जो उपन्यास यहाँ रचे गये वे उपन्यास उस ढंग के नहीं थे जैसे यूरोपीय उपन्यास थे। और एक बड़ी विचित्र सी बात है कि ये मानते हैं कि

उपन्यास का आरंभ यूरोप से हुआ था। अद्यतन खोज में यह भी सिद्ध हो चुका है कि उपन्यास का जन्मदाता एशिया है और जापान की एक लेखिका लेडी मुरासाकी ने पहला उपन्यास लिखा 'द टेल्स ऑफ गेंजी (1000 ई.)। तो यह भी एक भ्रम है कि उपन्यास का उदय यूरोप में हुआ। क्योंकि पश्चिमी आलोचकों ने सबकुछ अपने दृष्टिकोण से लिखा। अपने यहाँ के उपन्यासों को आधार बनाकर तो उन्होंने उपन्यासों की अलग व्याख्या की। अपने यहाँ जो उपन्यास लिखे गए, उन उपन्यासों को आधार मानकर अगर व्याख्या करें तो निश्चित तौर पर उपन्यास की एक नई संरचना हमारे सामने आती है। मूल रूप में कथा और उपन्यास में कोई भेद नहीं है। दोनों में कहानी ही कही जाती है।

प्रश्न : कथा, उपन्यास, आख्यान कई पदों का इस्तेमाल होता है। आप किसे उपयुक्त मानते हैं?

उत्तर : आख्यान का जो मूल अर्थ है वह है ऐतिहासिक कथा। पर इसका उपयोग आज 'Narration' के रूप में हो रहा है। देखिये उपन्यास से अच्छा शब्द मुझे लगता है–कादंबरी। मराठी में उपन्यास को कादंबरी ही कहा जाता है। कादंबरी भारतीय शैली की कथा शैली है जिसको भारत में हम 'नवल कथा' भी कह सकते हैं। पर कादंबरी कहें तो अच्छा लगता है, अपना-अपना सा लगता है। 'उपन्यास' में कृत्रिमता, स्थूलता, आरोपण लगता है, सहजता नहीं।

प्रश्न : आपने बताया कि भारतीय उपन्यास नवजागरण और राष्ट्रीय आंदोलन की देन है। अगर प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों का परिप्रेक्ष्य रखें तो इसे आप किस तरह से देखेंगे?

उत्तर : भारतीय उपन्यास की अवधारणा पर नामवर सिंह, परमानंद श्रीवास्तव, मैनेजर पाण्डेय, मीनाक्षी मुखर्जी, रघुवीर चौधरी आदि विद्वानों ने विचार किया और इससे एक बात साफ होकर आई है कि भारतीय उपन्यास की अपनी संरचना है। गोपाल राय की मुकम्मल किताब है 'उपन्यास की संरचना'। भारतीय उपन्यास उदित इसलिए हुआ क्योंकि यहाँ नवजागरण हुआ। अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन हुआ और एक प्रतिरोध का अस्त्र बना भारतीय उपन्यास। चाहे फकीर मोहन सेनापति का 'छमाण आठकुंठ' हो या फिर प्रेमचंद की 'रंगभूमि'। ये दोनों ही उपन्यास बताते हैं कि किस तरह अपनी आजादी के लिए, अपनी जमीन के लिए व्यक्ति संघर्ष कर रहा था। बंकिम और प्रेमचंद के उपन्यास और कहानियाँ तो नवजागरण और राष्ट्रीयता

की ही देन है। नवजागरण में दो पक्ष बहुत महत्त्वपूर्ण थे। एक स्त्री मुक्ति और दूसरा जो शोषित, दलित है समाज का उसको साथ लेकर चलने की बात। बाबासाहेब अम्बेदकर और महात्मा गाँधी दोनों ही एक साथ राजनीति में आए। और दोनों ने दलितों के अधिकार की बात की। गाँधी जी ने अछूतोद्धार की बात की, अंबेदकर जी ने उनके अधिकारों की माँग की। यह उनकी दृष्टि में मुख्य फर्क था। दोनों का लक्ष्य एक ही था। इसलिए भारतीय उपन्यास में किसान आया, दलित आये और चूँकि हमारा देश परतंत्र था और परतंत्रता की बेड़ी को तोड़ने के लिए जो प्रयास हो रहे थे उसका जिक्र भी भारतीय उपन्यासों में आया। प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों को पढ़ने से यह साफ स्पष्ट हो जाता है।

प्रश्न : इन्द्र बसावड़ा का उपन्यास है, 'घर की राह' और इसे आपने हिन्दी का पहला दलित उपन्यास माना है? किस आधार पर? क्या दलित आलोचना में आपकी इस अवधारणा को स्वीकृति मिलेगी?

उत्तर : देखिये बड़ी विचित्र बात है कि हिन्दी का जो दलित साहित्य है वह आरंभ से ही हिन्दी साहित्य का एक प्रमुख अंग रहा है। और कविता हो, कहानी हो, उपन्यास हो, नाटक हो—सबमें शोषितों और वंचितों की कहानियाँ हिन्दी साहित्य में लगातार लिखी जाती रही हैं। हीरा डोम ने कविताएँ रचीं। और इसी प्रकार 1935 में इन्द्र बसावड़ा ने यह उपन्यास लिखा था 'घर की राह'। इस उपन्यास में एक दलित बच्चे के अवलोकन दृष्टि से पूरे उपन्यास को देखा गया है। वो बच्चा जब बड़ा होता है तो उसे कई अवरोधों का सामना करना पड़ता है। और हमारे समाज में दलितों को लेकर जो मानसिकता है, उस मानसिकता को इसमें दिखाया गया है। लेकिन यह उपन्यास डॉ० भीमराव अम्बेदकर के सिद्धांतों को आधार बनाकर नहीं लिखा गया है। बल्कि इस उपन्यास पर गाँधी का प्रभाव ज्यादा है। इस उपन्यास का नायक है, जो बच्चे से बड़ा होता है, उसका कांग्रेस के आश्रम में पालन-पोषण होता है और उसके बाद वह बहुत बड़ा चित्रकार बनता है। यह बच्चा ईसाई बनने से इंकार करता है। यह बच्चा मनुष्यता को, मानवता को बहुत महत्त्व देता है। तो एक जो बड़ी संकल्पना दलित साहित्य की है, उस संकल्पना को स्थापित करने वाला यह उपन्यास है। और सबसे बड़ी बात, इस उपन्यास की भूमिका प्रेमचंद ने लिखी है। तो सबसे बड़ी बात यह है कि इन्द्र बसावड़ा ने यह स्थापित किया कि मनुष्य का जन्म किसी भी जाति में हो, उसमें एक आंतरिक प्रतिभा होती है और वह अपनी इस

आंतरिक प्रतिभा से आगे बढ़कर अपने जीवन में बड़ा काम कर सकता है। इस उपन्यास का नायक दलित बच्चों को पढ़ाता है, उनको तरह-तरह की शिक्षा देता है और समाज कल्याण का काम करता है बिल्कुल गाँधी की तरह। तो इस तरह से एक व्यापकता है इस उपन्यास में। इस उपन्यास को पढ़ना चाहिए। मुझे किसी दलित आलोचक की कोई टिप्पणी इस पर नहीं मिली है। हिन्दी आलोचना की समस्या यह है कि आलोचना यहाँ रूढ़ियों पर चलती है। जो रूढ़ि एक बार बन गई उसको न तो कोई तोड़ने का प्रयास होता है और न उसकी उपेक्षा की जाती है। दलित आलोचना कुछ समूह या समुदाय के बीच ही सीमित होकर रह गई है। और यदि उस समूह या समुदाय पर बाहर से कोई टिप्पणी करना चाहता है, तो उसे स्वीकार नहीं करते। अब बजरंग बिहारी तिवारी दलित आलोचना के बहुत बड़े स्तंभ हैं। उन्होंने दलित आलोचना को जितना व्यापक आयाम दिया है शायद ही किसी ने दलित आलोचना को उतना व्यापक आयाम दिया हो। लेकिन वे भी उपेक्षा के शिकार हैं। और सबसे परेशानी की बात है कि दलित आलोचना जातिवाद का शिकार हो गई। और इससे दलित आलोचना को बहुत नुकसान हो रहा है। आज दलित मजबूत हो चुके हैं। आज दलितों के स्वर में एक मजबूती है। हमारे समाज में बहुत से ऐसे लोग हैं जो दलितों के साथ चलना चाहते हैं। पहले दलित अपने से अलग और ऊपर के समाज से जुड़ना चाहते थे. लेकिन समाज उन्हें जुड़ने नहीं देता था। आज उस समाज के कुछ लोग उनसे जुड़ना चाहते हैं तो शंका की निगाहें उठती हैं कि कहीं ये हमारा लंकादहन तो करने नहीं आया है। तो यह समस्या है—विश्वास की समस्या। मैं दलित आलोचकों से अपील करूँगा कि वे इस उपन्यास को पढ़ें। और पढ़ने के बाद टिप्पणी करें कि क्या इसे हिन्दी साहित्य का पहला दलित उपन्यास माना जा सकता है? मैं नहीं जानता हूँ कि इन्द्र बसावड़ा किस जाति के थे। बहुत खोज की लेकिन कुछ नहीं मिला मुझे अभी तक। कुछ लोगों ने बताया कि बाँस का जो काम करते हैं इन्द्र बसावड़ा उन्हीं में से आते हैं। लेकिन मैं बहुत ही विनम्रता से यह कहना चाहता हूँ कि मुझे अभी तक पता नहीं चल पाया कि इन्द्र बसावड़ा की क्या जाति थी। मुझे इससे फर्क भी नहीं पड़ता है। क्योंकि मैं किसी भी कृति को उसके 'कंटेंट' और 'टोन' के आधार पर तौलता हूँ। और यह मुकम्मल उपन्यास है दलित जीवन को लेकर।

प्रश्न : राष्ट्र के निर्माण में उपन्यास की क्या भूमिका हो सकी है?

उत्तर : उपन्यास वस्तुतः राष्ट्र की खोज है—ये बात भी मैं पहली

बार नहीं कह रहा हूँ। जहाँ तक मुझे याद है यह बात सबसे पहले मैंने प्रोफेसर नामवर जी के मुख से सुनी थी। आज प्रो० नामवर सिंह हमारे बीच नहीं हैं। लेकिन मैं उनको प्रणाम करता हूँ। उन्होंने जिस क्षेत्र को छुआ उसे नवजीवन दिया, नवदृष्टि दी, कविता पर ज्यादा काम किया उन्होंने। लेकिन नई कहानी पर विचार करते हुए भी, उन्होंने जब 'परिंदे' को पहली कहानी कहा तो लोग चौंक उठे। एकमात्र मार्क्सवादी आलोचक परिंदे को 'नई कहानी' का आगाज मान रहा है। इसी प्रकार नामवर जी की यह विशेषता थी कि वे नई बात कहते थे, विश्व साहित्य पढ़ते थे, भारतीय साहित्य पढ़ते थे और हमेशा उसमें से नए तत्त्वों की तलाश करते थे। उनसे ही पहली बार सुना था कि उपन्यास राष्ट्र की खोज है और राष्ट्र निर्माण की चेष्टा उसमें मिलती है। इस दृष्टि से हिन्दी के किसी भी उपन्यास को पढ़े, चाहे प्रेमचंद हों, चाहे नागार्जुन हों, चाहे रेणु हों, चाहे अमृतलाल नागर हों, चाहे हजारी प्रसाद द्विवेदी हों, सभी के उपन्यासों को पढ़ने पर आपको ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें एक राष्ट्र की, एक देश की तलाश हो रही है। और इस तलाश के क्रम में नए-नए आयाम सामने आ रहे हैं। और जहाँ तक राष्ट्र के निर्माण में उपन्यास की भूमिका की बात है—कहानी असर करती है। हम सूरदास की बात करते हैं, 'रंगभूमि' के सूरदास की तो हम गाँधी को याद करते हैं। सूरदास जिस ढंग से आंदोलन करता है वैसा ही आंदोलन बाद में गाँधी जी करते हैं। तो उपन्यासकार अपने उपन्यास में जो चरित्र गढ़ता है, जो परिवेश और समाज गढ़ता है उसमें भविष्य की आँखें होती हैं।

प्रश्न : उपन्यास अपने समय को, अपने परिवेश को, अपने युग को साथ लेकर चलता है और वह इसे प्रतिबिंबित भी करता है?

उत्तर : उपन्यास अपने समय को, अपने परिवेश को, अपने युग को साथ लेकर चलता है उसे प्रतिबिंबित भी करता है; इसमें कोई दो मत नहीं है। आजादी के समय, आजादी के दौरान मुख्य रूप से प्रेमचंद और उसके बाद जैनेन्द्र और अज्ञेय लगातार लिख रहे थे। और फिर इस दौरान लिखे उपन्यासों को ध्यान से देखें तो उसमें कहीं न कहीं एक आजादी की बात कही गई है। उसके बाद जब हमारा देश आजाद होता है तो फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल' इस बात की तसदीक कर देता है कि अब गाँधी नहीं रहेंगे। गाँधी सम्मानित नहीं होंगे बल्कि यहाँ पूँजीवाद और पूँजीपति सम्मानित होगा। और यहाँ जाति की बहुलता होगी, राजनीति की भी जाति होगी। इसी प्रकार अमृतलाल नागर अपने उपन्यासों को लिखते हैं तो

दिखाते हैं कि किस तरह से समाज करवट ले रहा है। इसी तरह से उपन्यास अपने युग को देखता भी है और दिखाता भी है। उपन्यास अपने समय का सही प्रतिबिंब और प्रतिछवि होता है।

प्रश्न : 'रैल्फ फॉक्स' ने एक पुस्तक लिखी 'उपन्यास और लोकजीवन'। भारतीय उपन्यास को इस कसौटी पर कसने पर आप क्या पाते हैं?

उत्तर : लोक जीवन का आधार है। लोक से ही संसार है और लोक ही उपन्यास का आधार है। लोक पर हमें व्यापक फलक पर विचार करना चाहिए। 'रैल्फ फॉक्स' जिस लोक की बात करते हैं वह जन से जुड़ा है। यानी उपन्यास जनता की आवाज है। उनके यहाँ लोक जन है।

प्रश्न : रेणु के 'मैला आँचल' से हिन्दी में आंचलिक उपन्यास का आरंभ हुआ। 'आंचलिक' और लोक में क्या कोई फर्क है?

उत्तर : आंचलिकता की अवधारणा और लोक की अवधारणा में कोई फर्क नहीं है क्योंकि दोनों का संबंध जनता से है। 'मैला आँचल' में रेणु ने जो एक वक्तव्य दे दिया था और कह दिया था कि मैला आँचल एक अंचल की कहानी है। उसी से आंचलिक शब्द, आंचलिक उपन्यास आलोचकों ने गढ़ लिया। और आंचलिक शब्द उन सभी कथाओं के लिए इस्तेमाल किया जाने लगा, जिनमें गाँव, देहात, गरीब, निर्धन की चर्चा हुई और जिनमें भाषा के स्तर पर स्थानीय भाषाओं की छौंक भी मिलती है; जैसे शिवपूजन सहाय की 'देहाती दुनिया' में भोजपुरी है। और रेणु में पूर्णिया और आस-पास की भाषा है, वहाँ के गीत हैं। विवेकी राय के उपन्यास हैं जिनमें भोजपुरी का प्रभाव है। तो इस तरह से आंचलिकता की अवधारणा सामने आई। लोक का मतलब स्थानीयता नहीं है। जहाँ केंद्र में जनजीवन है वह लोक है। आप 'मैला आँचल' पढ़ें, ध्यान से पढ़ें तो देखिए उसमें भारत का भविष्य झाँकता है। वह एक राजनीतिक उपन्यास है। मैं उसको राजनीतिक उपन्यास कहता हूँ, आंचलिक उपन्यास नहीं कहता हूँ। आंचलिकता तो एक शिल्प है जिस ढंग से वह उपन्यास कहा गया है; लेकिन उसकी जो दूरदृष्टि है, उसमें देश का भविष्य दिखाई देता है—जहाँ गाँधी नहीं होंगे, जहाँ जाति का प्रभाव होगा, जहाँ जाति से राजनीति सिद्ध होगी, वहीं है मैला आँचल। और आज हम देख रहे हैं कि किस तरह जाति राजनीति को निर्धारित कर रही है। गाँधी और अम्बेदकर केवल एक प्रतीक रह गए हैं। वे मूर्तियों तक सीमित रह गए हैं। लेकिन मुख्य जोर जाति का है, मुख्य जोर पूँजी का है,

मुख्य जोर पूँजीपति का है। इसलिए जो आंचलिक होता है वह जरूरी नहीं कि वह अपने अंचल का गीत सुनाकर समाप्त कर दे। क्योंकि वह बड़े फलक पर अपनी बात कहता है।

प्रश्न : आपने विवेकी राय पर काम किया है। 'माटी की महक' शीर्षक से आप एक पुस्तक संपादित कर चुके हैं और अभी आप उन पर एक विनिबंध (मोनोग्राफ) भी लिख रहे हैं। आप विवेकी राय को किस रूप में आँकते हैं? हिन्दी आलोचकों ने उन्हें 'निबंधकार' की कोटि में डाला?

उत्तर : विवेकी राय एक बड़े कथाकार हैं। जैसा मैंने पहले कहा कि हिन्दी आलोचना की एक विडम्बना है। हिन्दी आलोचना की यह कमी है कि वह किसी भी साहित्यकार को 'ब्राडेंड' कर देती है। जैसे फणीश्वर नाथ रेणु को आंचलिक उपन्यासकार कह कर ब्रांडेड कर दिया। उसी तरह विवेकी राय को एक 'निबंधकार' कहकर उन्हें एक पिंजरे में बंद कर दिया। मैंने विवेकी राय को बहुत पढ़ा है लगातार पढ़ रहा हूँ, उन पर साहित्य अकादमी के लिए एक मोनोग्राफ भी तैयार कर रहा हूँ। विवेकी राय को जब मैंने दोबारा पूरी तरह पढ़ा तो मैंने पाया कि वे मूलत: कथाकार हैं। वे मिट्टी की कथा कहते हैं, देश की कथा कहते हैं और सबसे बड़ी बात कि उनकी इस कथा की व्यापकता उनके निबंधों में भी है। हमारे प्रबुद्ध आलोचक इसलिए थोड़े से भ्रम में पड़ गए क्योंकि विवेकी राय के कथा साहित्य को देखने समझने के लिए उन्होंने बने बनाए आलोचना के पुराने औजारों का प्रयोग किया। विवेकी राय के कथा साहित्य को समझने के लिए नए औजार विकसित करने होंगे। कुछ औजार मैंने विकसित किए हैं और उन औजारों के माध्यम से मैंने यह बताने की कोशिश की है कि विवेकी राय कथा कहते-कहते निबंध में चले जाते हैं, निबंध लिखते-लिखते कथा में प्रवेश कर जाते हैं। लेकिन उनकी जो मूल संवेदना है वह कथा लेखक की ही संवेदना है। विवेकी राय की रचनाओं में देखने को मिलता है कि राष्ट्र के निर्माण में जय जवान, जय किसान की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उनके उपन्यास–'मंगलभवन' और 'अमंगलहारी' में राष्ट्र-निर्माण की खोज कर रहे हैं–एक मास्टर हैं और एक रिटायर्ड मेजर। दूसरी बात यह है कि उन्होंने आजादी के बाद नेहरू जी के नेतृत्व में जो योजनाएँ बनीं उन्हें उन्होंने एक आलोचनात्मक दृष्टि से परखा है। विवेकी राय जैसे कई रचनाकार हैं जिनका सही मूल्यांकन अभी शेष है खासकर वे जो केन्द्र से दूर हैं।

प्रश्न : आपने रामधारी सिंह दिनकर पर एक पुस्तक संपादित की है–'दिनकर : व्यक्तित्व और रचना के आयाम'। आमतौर पर दिनकर को वीर रस से ओतप्रोत कवि माना जाता है? आप दिनकर को कैसे देखते हैं?

उत्तर : रामधारी सिंह दिनकर भी अपनी रचनाओं में राष्ट्र की खोज करते हैं। रामधारी सिंह दिनकर को आमतौर पर वीर रस से ओतप्रोत कवि माना जाता है, लेकिन उर्वशी की रचना कर उन्होंने दिखा दिया कि वे वीर रस के नहीं बल्कि श्रृंगार रस के भी कवि हैं। उन्होंने जिस रूप में इतिहास की व्याख्या की है वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। असल में दिनकर का काव्य भी राष्ट्र की खोज है। 'संस्कृति के चार अध्याय' में जिस तरह उन्होंने भारत को समझने की कोशिश की है, वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। मैं दिनकर को एक ऐसा आकुल कवि मानता हूँ जो देश के दुख से दुखी होता है और देश के सुख से आह्लादित होता है। दिनकर ने अपने जीवन-संघर्ष को अपनी कविता में उड़ेला है। उनके लिए देश से बढ़कर कोई चीज नहीं है।

प्रश्न : आप विदेश में भी रहे, वहाँ सोफिया विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। आप अपने कुछ अनुभव साझा करें।

उत्तर : मेरा जो विदेश में अध्यापन का अनुभव रहा, वह बहुत ही सुखद रहा। वहाँ जाकर मेरी दृष्टि में काफी विकास और विस्तार हुआ और मुझे विश्व साहित्य से भी, बुल्गारियन साहित्य से भी परिचित होने का मौका मिला। मैं सोफिया विश्वविद्यालय में अध्यापन कर रहा था। वहाँ पर विदेशी विद्यार्थियों को मैं हिन्दी पढ़ाया करता था। एक दिन मैंने विद्यार्थियों को कुछ ऐसाइमेंट दिया और मैंने कहा कि देखो प्रेमचंद को पढ़े बिना भारत को नहीं समझा जा सकता। तुम ही कोई ऐसा रचनाकार ढूँढ़ कर लाओ, जिसके बिना बुल्गारिया को नहीं समझा जा सकता है। उनमें से एक विद्यार्थी दो दिन के बाद आया और उसने कहा सर एक एलिन-पेलिन नाम के एक कथाकार हैं जो प्रेमचंद जैसा लिखते हैं। एलिन-पेलिन (1877-1948) का मूल नाम दिमितेर स्तोयानोव है। फिर मैंने 'एलिन-पेलिन' पर खोज की और किताबें पढ़ीं। फिर मैंने देखा कि 'एलिन-पेलिन' भी प्रेमचंद की तरह ही गाँव की कथा कहते हैं। वह देश की बात करते हैं। वह अपनी मिट्टी की बात करते हैं। और सबसे बड़ी बात कि वे प्रेमचंद की तरह गाँव और किसानों की बात करते हैं। और उसके किसान विद्रोह भी करते हैं और एक विद्रोही चेतना भी है जो प्रेमचंद के किसानों में भी देखने को मिलती है जैसे गोबर में। तो यह

[illegible] के विद्यार्थियों में निर्मल वर्मा बहुत लोकप्रिय हैं, अज्ञेय बहुत लोकप्रिय हैं, कमलेश्वर बहुत लोकप्रिय हैं और उनके साहित्य को वहाँ के विद्यार्थी और वहाँ के अध्यापक चाव से पढ़ा करते हैं। दूसरी बात कि वे [illegible] मध्यकालीन साहित्य खासकर [illegible] में बहुत रुचि है, ब्रजभाषा में रुचि है, अवधी में रुचि है। ब्रजभाषा, अवधी और खड़ी बोली को अलग-अलग खानों में बाँटकर देखते हैं और इसे हिन्दी साहित्य की एक शृंखला नहीं मानते हैं, बल्कि ये मानते हैं कि हिन्दी तो आधुनिक काल में खड़ी बोली से शुरू हुई और उसी को वे हिन्दी कहते हैं। बाकी ब्रजभाषा और अवधी अपभ्रंश को अलग मानते हैं। हालाँकि कई बार मुझे उनसे बहस हुई लेकिन उनका यह मानना है।

प्रश्न : आपने कथालोचना का क्षेत्र क्यों चुना?

उत्तर : आरंभ से ही मेरी दिलचस्पी कथा में थी। तो शोध भी कथा में ही करने का विचार हुआ, पीएच.डी. मैंने प्रेमचंद पर की। और मेरे शोध निदेशक थे प्रोफेसर रामखिलावन राय। लेकिन मेरे गुरु मुख्य रूप से बाबू जी ही थे—प्रो. गोपाल राय। मेरे शोध का विषय निर्धारित हुआ—आलोचनात्मक यथार्थवाद और प्रेमचंद। और फिर प्रेमचंद को मैंने पढ़ा फिर यथार्थवाद को पढ़ा और एक नये ढंग से प्रेमचंद को देखने की कोशिश की और उसमें मैंने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि प्रेमचंद आदर्शोन्मुख यथार्थवादी उपन्यासकार नहीं हैं, बल्कि आलोचनात्मक यथार्थवादी उपन्यासकार हैं। यानी यथार्थ को एक आलोचनात्मक दृष्टि से देखते हैं। बाद में मैं समीक्षा पत्रिका से जुड़ा और 1987-88 में उसका सहायक संपादक बन गया था। वह मुझे विरासत के रूप में मिला। मुझे उसके लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ा। मैं उपन्यासों और कहानियों की समीक्षा और लेख लिखने लगा। इस तरह एक अभिरुचि उत्पन्न हो गई। पोस्ट डॉक्टोरल में भी उपन्यास विषय रहा। पर अब भारतीय उपन्यास को विषय बनाया। कविताएँ पढ़ता हूँ, लेकिन कविता पर लेख मैंने कम ही लिखा है। और मुझे यह लगता है कि यह मेरा व्यक्तिगत विचार है कि कविताओं को महसूस करने में जो आनंद मिलता है, वह लिखने में सारा आनंद फूटकर बिखर जाता है। इसलिए मैं कविताएँ पढ़ता हूँ। हालांकि दिनकर पर मैंने काफी विस्तार से लिखा है। दिनकर की कविताओं पर और उनपर एक किताब भी मैंने संपादित की है। तो दिनकर मेरे प्रिय कवि हैं, जिस तरह से विवेकी राय मेरे प्रिय कथाकार

हैं, उसी तरह दिनकर मेरे प्रिय कवि हैं और इसलिए दिनकर [illegible] लेकिन मैं केदारनाथ सिंह को भी एक बहुत बड़ा कवि मानता हूँ और उनकी एक कविता 'बाघ' जिसे पढ़ाता हूँ एक ऐसी कविता है जो [illegible] को अतिक्रमित करती है। तो इसलिए जो बड़े कवि हैं, जो अच्छे कवि हैं उनको पढ़ाता हूँ लेकिन आज कविताओं की जो स्थिति हो गई है—वो [illegible] जाता है, वो खाता है, मैं जीता हूँ और मैं मरता हूँ। इस तरह की कविताएँ लिखी जाने लगी हैं और क्यों मैं अपना समय बर्बाद करूँ इस तरह की कविताओं को पढ़कर। कहानियाँ भी काफी रिपिटेटिव हो गई हैं लेकिन कहानियों में अभी भी दम है। उपन्यास अच्छे लिखे जा रहे हैं, और [illegible] सदी में भी बहुत बेहतरीन उपन्यास लिखे गये। और इसलिए मैं [illegible] कहानियाँ और उपन्यास पढ़ता रहता हूँ और उन पर लिखता हूँ

प्रश्न : आपने समीक्षा क्यों बंद की?

उत्तर : देखिए जैसा कि मैंने कहा कि समीक्षा से मैं [illegible] जुड़ा और जब मैं सोफिया से 2008 में लौटा तो बाबूजी ने कहा कि वह थक चुके हैं और वो समीक्षा का भार मुझे देना चाहते हैं। मैं समीक्षा कभी भी अपने हाथ में नहीं लेना चाहता था। मैं अपने को कभी भी समीक्षा का संपादक योग्य नहीं समझता था। मैंने बिल्कुल हाथ खड़े कर दिए थे हालाँकि बाबूजी लगभग 2005 के बाद जब वो दिल्ली आए उसके बाद से ही वह मुझ पर लगातार दबाव बना रहे थे कि 'समीक्षा' अपने हाथ में ले लो। 'समीक्षा' का काम शुरू कर दिया था लेकिन संपादकत्व मैंने नहीं संभाला था, लेकिन 2008 में मैं सोफिया से लौटा तो उन्होंने बिल्कुल आदेशात्मक स्वर में कहा कि या तो मैं 'समीक्षा' बंद कर दूँगा या फिर तुम 'समीक्षा' चलाओ। क्योंकि समीक्षा मेरी बेटी है। मेरे सामने कोई विकल्प नहीं रह गया तो मैंने उनसे यही कहा कि ठीक है मैं इतना आपको आश्वासन देता हूँ कि 'समीक्षा' की स्वर्ण जयंती जरूर मनाई जाएगी। इससे आगे की योजना मैं नहीं बना सकता हूँ। 50वें वर्ष का अंतिम विशेषांक निकालकर उसको मैंने बंद कर दिया, क्योंकि हरेक चीज की एक आयु होती है। 'समीक्षा' गोपाल राय की बेटी थी। समीक्षा उनका एक मिशन थी, उस मिशन को पूरा करने में मैंने सहयोग दिया। लेकिन मुझे लगा कि अब समीक्षा लड़खड़ा रही है और समीक्षा मेरे हाथ से छूट रही है। इसलिए मैंने समीक्षा बंद कर दी। दूसरी बात यह है कि वित्त भी अब संकुचित हो गया था और इसके अलावा कई

तकनीकी समस्याएँ हो रही थीं। निश्चित रूप से समीक्षा के हटने से एक शून्यता आई है; पर उसकी भरपाई होगी। और जैसे ही मैं थोड़ा भार मुक्त होऊँगा, 'समीक्षा' को एक नये रूप में जरूर निकालूँगा।

प्रश्न : आपके लेखन की आगे की योजना क्या है?

उत्तर : अभी साहित्य अकादमी के लिए विवेकी राय पर निबंध तैयार कर रहा हूँ। अभी मैं उसी में जुटा हूँ। उसके बाद मेरी यह योजना है कि मेरे बहुत सारे लेख बिखरे पड़े हैं उनको मैं एकत्रित करूँ और उसमें से जो उपयोगी हो उसे एक सिलसिलेवार करके एक कथालोचना की एक पुस्तक प्रकाशित करूँ। दूसरा यह कि अभी यह मन में योजना बन रही है कि बाबूजी की विरासत को आगे बढ़ाऊँ और 2000 ई. के बाद जो कहानी और उपन्यास लिखे गए उनका इतिहास लिखूँ। ये मेरा टारगेट है और मैं इस टारगेट पर 2020 जनवरी से इस पर काम करना शुरू करूँगा। पहले उपन्यास का इतिहास लिखूँगा और इसके बाद कहानी का इतिहास लिखूँगा 2020 तक। 2001 से 2020 तक, क्योंकि 2000 तक का इतिहास बाबूजी ने लिख दिया है। एक बात मैं बता देना चाहता हूँ कि जैविक रूप से ही नहीं बल्कि बौद्धिक रूप से मैं अपने बाबूजी का एक प्रतिरूप हूँ। मेरे व्यक्तित्व पर उनका काफी प्रभाव है। अब तो हमारे कई नजदीकी यह भी कहते हैं कि बाबूजी की तरह लगने लगे हो। लेकिन मैं बाबू जी नहीं हो सकता। वो जितना श्रम करते थे और जितने सुचिंतित ढंग से काम करते थे उतने सुचिंतित ढंग से मैं काम नहीं कर सकता हूँ। लेकिन मैं कोशिश करता हूँ कि कुछ काम करता रहूँ और निश्चित रूप से बाबू जी जिस तरह से सोचते थे मैं उनसे अलग ढंग से सोचता हूँ। हरेक व्यक्ति अपने ढंग से सोचता है। उपन्यास, कहानी और साहित्य के अन्य विचारों को लेकर उनसे मेरे कई भेद और मतभेद रहे। लेकिन मतभेद होने के कारण हमारा रिश्ता बहुत मजबूत हुआ और वे मुझे सराहते भी थे, मेरी प्रशंसा भी करते थे। वो मेरे सबसे बड़े आलोचक भी थे और सबसे बड़े निदंक भी थे। और वो पिता थे तो इसलिए डाँटते भी थे लेकिन कभी भी उन्होंने मेरे लेखन में मेरे साहित्यिक जीवन में कभी भी हस्तक्षेप नहीं किया। लेकिन मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ और मैं कुछ नहीं हूँ। मैं अपने बाबूजी के स्नेह से सिंचित हूँ। उन्हीं का जो दिया हुआ है आज उसी को भोग भी रहा हूँ और उसी से सत्यकाम बना है और सत्यकाम बना रहेगा। बहुत बहुत धन्यवाद।

❑